Chap-1

प्रथम अध्याय

नयी कविता की भूमिका और विकास के विविध पंथ

(क) नयी कविता की पृष्ठभूमि

(ख) नयी कविता की स्वरूप

(ग) नयी कविता का उद्‌भव एवं विकास

(घ) नयी कविता के विविध नये पक्ष

प्रथम अध्याय

नयी कविता की भूमिका और विकास के विविध पंथ

प्रत्येक युग अपने अनुरूप नये मान मूल्यों की सृष्टि करता है और पुरानी मान्यताओं को अपनी कसौटी पर कस कर उनके खरेपन की जाँच करता है। इस प्रकार जो मूल तक जाने वाली नयी दृष्टि विकसित होती है उससे न केवल समसामयिक साहित्य और कला का मूल्यांकन किया जाता है वरन् पूर्व–प्रतिष्ठित कृतियों की भी पुनर्परीक्षा की जाती है। किसी भी साहित्य युग की महत्ता सौन्दर्यपरक मूल्यान्वेषण की सजगता तथा व्यापक सामाजिक परिवेश से गहरी सम्पृक्ति के आधार पर ऑकी जाती है। जिससे सृजन–शीलता को सही दिशा वास्तविक प्रेरणा प्राप्त होती है। नयी कविता दौर में मूल्य–चेतना सृजनात्मक धरातल पर और स्वतन्त्र रूप से भी बहुत सक्रिय रही है।

नयी कविता हिन्दी काव्य का सबसे नया उन्मेष है। आज तक हिन्दी काव्य की किसी भी धारा को लेकर वैसा दीर्घ एवं तीव्र वाद–विवाद नहीं हुआ जैसा नयी कविता को लेकर हुआ है। नयी कविता ने न केवल कविता की रचना प्रक्रिया के क्षेत्र में सम्पूर्ण क्रान्ति की है वरन् कविता के प्रतिमानों के सम्बन्ध में भी उसने समीक्षकों एवं साहित्य के विचारकों को नितान्त नये सिरे से सोचने के लिए बाध्य किया है। आधुनिक हिन्दी काव्य में नयी कविता के स्थान और उसके मूल्यांकन के सम्बन्ध में कठिनाई होती तो समझा जा सकता था, किन्तु कठिनाई और विवाद नयी कविता के जन्म विकास की स्थितियों और नामकरण जैसे तथ्य को लेकर है।

(क) नयी कविता की पृष्ठभूमि :

नयी कविता की पृष्ठभूमि में जिन विशाल बौद्धिक सांस्कृतिक और सामाजिक अर्न्तद्वन्द्वों, संघर्षों एवं चेतना शक्तियों का योग रहा है उनकी व्याख्या किये बिना आज की नवीनतम प्रवृत्तियों की व्याख्या करना कठिन ही नहीं

असम्भव भी है। कविता को लोकोन्मुखी बनाने तथा उसमें नयापन लाने का प्रयास आचार्य शुक्ल तथा द्विवेदी जी के समय से ही जारी रहा। आचार्य शुक्ल अपने इतिहास ग्रन्थ में इस नयेपन की चर्चा करते हुए लिखते हैं कि– "उस पत्रिका के प्रथम दो तीन वर्षों के भीतर ही ऐसे लेख निकले जिसमें साफ–साफ कहा गया कि अब नायिका भेद और श्रृंगार में ही बँधे रहने का जमाना नहीं है, संसार में न जाने कितनी बातें हैं जिन्हें लेकर कवि चल सकते हैं। इस बात पर द्विवेदी जी बराबर जोर देते रहे और कहते रहे कि 'कविता के बिगड़ने और उसकी सीमा परिमित हो जाने से साहित्य पर भारी आघात होता है'। द्विवेदी जी 'सरस्वती' के संपादन काल में कविता में नयापन लाने के बराबर इच्छुक रहे। नयापन आने के लिए वे नये–नये विषयों का नयापन या नानात्व प्रधान समझते रहे और छंद, पदावली, अलंकार आदि का नयापन उसका अनुगामी।"[1] किसी नये शब्द नये तथ्य या नये विषय को खोजने का अर्थ ही है किसी नये अनुभव खण्ड अथवा वास्तविकता के किसी नये पहलू की खोज। लक्ष्मीकान्त वर्मा अनुभव और अभिव्यक्ति की इस विभिन्नता को इन शब्दों में व्यक्त करते हैं– "देश समाज और व्यक्ति की पृथक–पृथक समस्यायें पृथक–पृथक रूप में व्यक्त हुई हैं और इन सब का मिश्रित प्रभाव हमारे साहित्य पर एक विचित्र रूप में पड़ा है एक ओर यदि भारत–भारती के गीत है तो दूसरी ओर बंगला साहित्य से प्रभावित एक नयी शैली और शिल्प है जिसमें रहस्यवाद है, छायावाद का स्वतन्त्र अस्तित्व है, नयी शब्द योजना और नया छन्द विन्यास है। एक ओर पुनरुत्थान की भावना से इतिहास के स्वर्ण–युग की मान्यताएँ प्रसाद के नाटकों में व्यक्त हुयी हैं तो दूसरी ओर अंग्रेजी साहित्य से प्रभावित रोमैन्टिक कविताएँ हैं।"[2] भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने गद्य साहित्य के साथ–साथ कविता की धारा को भी नये–नये क्षेत्रों की ओर मोड़ा, आचार्य शुक्ल ने इसको कुछ इस प्रकार रेखांकित किया है– "इस नई धारा की कविता के भीतर जिन नये–नये विषयों के

---

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ०–349
2. लक्ष्मीकान्त वर्मा, नयी कविता के प्रतिमान, पृ० 3–4

प्रतिबिम्ब आये वे अपनी नवीनता से आकर्षित करने के अतिरिक्त नूतन परिस्थिति के साथ हमारे मनोंविकारों का सामंजस्य भी घटित कर चले। कालचक्र के फेर से जिस नयी परिस्थिति के बीच हम पड़ जाते हैं, उसका सामना करने योग्य अपनी बुद्धि को बनाये बिना जैसे काम नहीं चल सकता, वैसे ही उसकी ओर अपनी रागात्मिका वृत्ति को उन्मुख किए बिना हमारा जीवन फीका, नीरस, शिथिल और अशक्त रहता है।''[1] मनुष्य सदा से परिवर्तन का आकांक्षी रहा है वस्तुतः ईश्वर की यह सृष्टि ही परिवर्तनशील है, फिर भला साहित्य में परिवर्तन क्यों न हो, नित नूतनता का ग्राही मानव अधिक दिनों तक छायावाद के धरातल पर भी नहीं टिका रह सका। यह उसकी कमजोरी नहीं उसकी स्वाभाविक प्रगति कही जायेगी।

हिन्दी साहित्य में विभिन्न काव्यधाराओं से सम्बद्ध सभी वादों का अपना पृथक–पृथक इतिहास है उन सबके उद्भव के अलग–अलग सबल कारण हैं। ''हिन्दी साहित्य में नयी कविता की धारा जो कई आन्दोलनों को अपने में समेटे हुए है, अकारण उत्पन्न नहीं हुई। वह किसी शून्य से टपकी हुयी नहीं है। किसी युग की कविता पूर्णतया मौलिक अथवा स्वतन्त्र नहीं हुआ करती। कहीं न कहीं उसका सम्बन्ध अपने पूर्व की परम्परा से जुड़ा होता ही है।''[2]

किसी साहित्यिक प्रवृत्ति के उद्भव के अनेक कारण होते हैं उसके पीछे उसका अपना एक इतिहास होता है। हिन्दी की नयी कविता की उत्पत्ति का भी अपना एक इतिहास है तथा इसके सम्पूर्ण रचना विधान के अपने अनेक आयाम हैं। ''तारसप्तक' का प्रकाशन जिस काल में हुआ वह साहित्येतिहास की दृष्टि से ही नहीं सामाजिक, राजनीतिक, वैचारिक आदि दृष्टियों से भी एक विशिष्ट काल है। इसी काल में कविता में नयी काव्य चेतना का उदय हुआ।''[3] सन् 1936 ई० से 'तार सप्तक' के प्रकाशन तक की स्थितियों का अध्ययन करने से कई तथ्य

---

1. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास, पृ०–319
2. डॉ० मंजु दूबे, नयी कविता में युगबोध, पृ०–17
3. डॉ० राजेन्द्र प्रसाद, तार सप्तक के कवियों की समाज चेतना, पृ०–9

सामने आते हैं। राजनीतिक दृष्टि से यह वह काल है जिसमें राष्ट्रीय स्वतन्त्रता आन्दोलन अभी सफल नहीं हुआ था। कभी स्वतन्त्रता प्राप्ति की आशा बँधती दिखायी पड़ती तो कभी तत्कालीन असफलता निराशा में डाल देती थी। इन दिनों राजनीति में समाजवादी विचारधारा पनपने लगी थी। सन् 35 के जमाने में साहित्य और राजनीति के सम्बन्धों को लेकर गरम चर्चा चल पड़ी, जिस तरह छायावादी युग में साहित्य समाज का दर्पण है कहने की हवा थी उसी तरह इस युग में साहित्य और राजनीति की घनिष्ठता पर जोर दिया जाने लगा। "प्रयोग शब्द को वाद–दूषित पाकर 'नई कविता' नामक संज्ञा का प्रचलन हुआ। 1951 में दूसरा सप्तक के प्रकाशन के साथ 'नई कविता' के जिन सिद्धान्तों का सूत्रपात किया गया, उनका विस्तार तीसरा सप्तक के प्रकाशन–काल 1959 तक अबाध गति से होता रहा।"[1]

कांग्रेस की आंशिक असफलता के कारण उसमें दरारें पड़ गयी थीं। गॉधी जी में सबकी आस्था एक सी नहीं रही थी, एक दल गांधी जी के साथ मिलकर अहिंसात्मक रास्ते से आगे बढ़ना चाहता था जबकि दूसरा दल सुभाष चन्द्र बोस के नेतृत्व में क्रान्तिवादिता के मार्ग पर अग्रसर होकर पूर्ण स्वराज्य पाना चाहता था। सुभाष चन्द्र बोस ने 'फारवर्ड ब्लाक की स्थापना कर बहुत से क्षुब्ध युवकों को अपने साथ कर लिया था। इधर साहित्य के मंच पर 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना हुयी थी। अंग्रेजी शासन से भारत वर्ष की जनता का दम घुटने लगा था, अब तक तो वह सब कुछ मूक होकर सहती एवं उसकी गुलामी करती आ रही थी। किन्तु द्वितीय महायुद्ध आरम्भ होने पर न चाहते हुए भी भारत की जनता को ब्रिटिश सरकार के लिए युद्ध में भाग लेना पड़ा और अकारण ही उसे पिसना पड़ा चूँकि भारत अंग्रेजों के अधीन था, इसलिए अंग्रेजों को कुछ भी करने का अधिकार था, जबकि भारतीयों का मौलिक अधिकार तक भी समाप्त था। भारतीय जनता की राजनीतिक स्वतन्त्रता का अपहरण तो किया ही जा रहा था, शासन का दमन चक्र अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुका था।

---

1. डॉ० नामवर सिंह, कविता के नए प्रतिमान, पृ०–90

फलस्वरूप लोगों में धीरे–धीरे क्षोभ और विद्रोह की अग्नि महाज्वाल का रूप ग्रहण कर रही थी उस अग्नि को फ्रांस की राज्यक्रान्ति (1789) एवं 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा 19वीं शताबदी के प्रारम्भ में इंग्लैण्ड की औद्योगिक क्रान्ति ने और भी प्रज्वलित कर दिया। परिणाम स्वरूप भारतीयों में राजनीतिक चेतना बड़े वेग से उभरने लगी। जो सर्वप्रथम 1857 की सशस्त्र क्रान्ति (सैनिक विद्रोह) के रूप में सामने आयी।

"चेतना की परिधि के विस्तार तथा कवि व्यक्तित्व के विकास एवं स्वातन्त्रय का परिणाम काव्य के रूप पर पड़ना अनिवार्य है और उचित भी, क्योंकि रूप विधान सदा युग विशेष की मनःस्थिति को प्रतिबिम्बित करता आया है।"[1]

यद्यपि 1857 की क्रान्ति मात्र एक सैनिक विद्रोह न थी वरन् अंग्रेजी शासन के अत्याचार, अन्याय एवं शोषण के विरूद्ध स्वदेश एवं स्वधर्म की रक्षा के लिए भारत का प्रथम स्वतन्त्रता संग्राम थी। यद्यपि यह क्रान्ति पारस्परिक मतभेद एवं सैनिक दुर्बलता के कारण अंग्रेजों द्वारा कुचल दी गयी, फिर भी इसका गहरा प्रभाव राष्ट्रीय आन्दोलन पर पड़ा। "अन्तर्राष्ट्रीय पैमाने पर फासिज्म का उदय, म्यूनिख समझौता, स्पेन में जनतन्त्र की रक्षा के लिए देश–देश के लेखकों और बुद्धिजीवियों का मोर्चे पर लड़ना, द्वितीय महायुद्ध की विनाशकारी छाया राष्ट्रीय पैमाने पर कांग्रेसी मन्त्रिमण्डलों का निर्माण और पतन, त्रिपुरा कांग्रेस और राष्ट्रीय अन्तर्द्वन्द्व, राष्ट्रीय आन्दोलन में शिथिलता तथा नये उभरने वाले वामपंथी दलों का बढ़ता असन्तोष।"[2] आदि ऐसी ही महत्वपूर्ण घटनाएँ एवं तथ्य है।

इस संदर्भ में द्वितीय विश्वयुद्ध के प्रभाव को अलग से रेखांकित किया जा सकता है। 1 सितम्बर, 1939 को जर्मनी ने पोलैण्ड पर आक्रमण कर दिया और इंग्लैण्ड ने 3 सितम्बर 1939 को जर्मनी के विरूद्ध युद्ध की घोषणा कर दी।

---

1. सम्पादन (जगदीश गुप्त, रामस्वरूप चतुर्वेदी, विजय देवनारायण साही), पृ०–21, नयी कविताः सैद्धान्तिक पक्ष (खण्ड–एक), पृ०–21
2. डॉ० नामवर सिंह, कविता के नए प्रतिमान, पृ०–86

परिणामतः द्वितीय महायुद्ध प्रारम्भ हुआ, ब्रिटिश सरकार ने बिना भारतीय नेताओं के परामर्श के ही युद्ध की घोषणा कर दी। भारतीय सैनिकों को भी इसमें हिस्सा लेना पडा। इस युद्ध में अपार धनराशि खर्च हुई जिसका बोझ भारतीय जनता को उठाना पड़ा। इसका असर साहित्य पर बहुत गहरे पड़ा। "इसके फलस्वरूप कविता में पहली बार किसानों– विशेषतः मजदूरों के गंदो पैरों की पवित्र धूल दिखाई पड़ी। संध्या के झुटपुटे में पंत जी को चिड़ियों की 'टी–वी–टी–टुट्–टुट्' के साथ ही डगमग डग घर का मग मापते हुए कुछ श्रमजीवी दिखाई पड़ गये और टीले पर उन्हीं के नंगे तन गदबदेबदन वाले लड़के भी आ गये। कविता में पहली बार इतनी व्यापक सहानुभूति का प्रवेश हुआ। परिस्थिति वश यह सहानुभूति 'बौद्धिक' ही थी और यह मानवता भी केवल सहानुभूति रही, फिर भी हृदय की इस विशालता ने साहित्य में नवजीवन का संचार कर दिया।"[1]

सन् 1936 के बाद स्वयं छायावादी कवि छायावादी प्रवृत्तियों को छोड़ने लगे थे। पन्त ने भी युगान्त की घोषणा कर दी। उनकी युगवाणी 1939 में तथा ग्राम्या 1940 में प्रकाशित हुई। युगवाणी में जिस युग के गद्य को वाणी देने का प्रयत्न किया गया है उसमें बसंत के स्थान पर पतझड़ हरे पल्लव के स्थान पर कुछ विवर्ण और कीड़ों द्वारा काटे हुए पत्ते तथा टेढ़ी–मेढ़ी पतली ठूँठी टहनियों के बन की ओर कवि का ध्यान गया है। इसमें कवि पिछले युगों के मृत आदर्शों और जीर्ण रूढ़ि–रीतियों की भर्त्सना का संकल्प लेता है।

'ग्राम्या' में कवि 'यहाँ न पल्लव वन में मर्मर' की स्पष्ट घोषणा करता है, दैन्य–जर्जर' असंख्य जनों तथा 'कीड़ों से रेंगते मनुज शिशु' का चित्रण करता है। यहाँ उसे कभी 'मिट्टी से भी मटमैले तन' वाले गँवई लड़के दीख जाते हैं, कभी सिर पर कूड़ा ढोती मजदूरनी दिखलायी पड़ती है।"[2] सन् 40 के बाद देश

---

1. डॉ० नामवर सिंह, आधुनिक साहित्य की प्रवृत्तियाँ, पृ०–66
2. ग्राम्याः द्रष्टव्य कविताएँ : ग्राम कवि, पृ०–13, गाँव के लडके, पृ०–27, मजदूरनी के प्रति, पृ०–84, (पन्त)

पर युद्ध का असर स्पष्ट रूप से दिखलायी पड़ने लगा। सन् 42–43 तक आते–आते उसने अपने भीमकाय पंजों में देश को जकड़ लिया जिन्दगी की जरूरी चीजों की जोरों से कमी होने लगी। अन्न संकट मुँह फैलाकर सामने आया, कपड़ा, तेल, चीनी, नमक, ईंधन दुर्लभ हो गया, चोर बाजारी मुनाफा खोरी आसमान को छूने लगी भुखमरी फैली चीजों के दाम इतने आश्चर्यजनक हो गये कि सुनकर विश्वास नहीं होता था। लगभग समस्त पाश्चात्य साहित्य में द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के बाद जो साहित्य आया उसमें विषाद निराशा, दुश्चिंता, बैचैनी की प्रतिध्वनि सुनाई पड़ती है उन दिनों पश्चिम ने यह अनुभव किया कि वह एक ऐसे बिन्दु पर पहुँच गया है कि जिसके आगे अंधेरा है, अनिश्चय है दिग्भ्रम है। अन्तरात्मा इस हद तक विक्षुब्ध हो उठी कि वह अपना विवेक खो बैठी। परिणामतः सत्य–असत्य, अच्छे–बुरे, सत्कर्म दुष्कर्म आदि के भेद मिट से गए। 'सन् 38 में कवि श्री सुमित्रा नन्दन पन्त ने जब 'रूपाभ' में कल्पना के आकाश से यथार्थ की धरती पर उतरने की धोषणा की तब औपचारिक रूप से छायावाद की मृत्यु हो गयी, दस वर्ष बाद 'स्वर्ण किरण' और 'स्वर्ण धूलि' में जब उनकी काव्य धारा 'ग्राम्या से विपरीत दिशा में प्रवाहित हुई तब छायावाद को नया जीवन मिला।''[1] प्रेम और सौन्दर्य के शूक्ष्म मानसिक विवृत्ति तक में पन्त जी की कल्पना समर्थ हुयी है और 'यत्र–तत्र यही कल्पना आध्यात्मिक उड़ान भी लेती चली है इसे ही प्रचलित शब्दावली में छायावाद कहा जाता है।' ''नवीन हिन्दी कविता में सबसे श्रेष्ठ सृष्टि प्रतिभा लेकर श्री सुमित्रा नन्दन पन्त का विकास हुआ है।''[2]

द्वितीय महायुद्ध जन्य सामाजिक और मानवीय मूल्यों के विघटन, निराशा, कुण्ठा, अवसाद, भाग्यवाद आदि स्थितियों का चुभता नग्न चित्रण हमें प्रयोगवादी कविता में मिला था। तज्जन्य झकझोर देने वाली भविष्य की आशंका, अनिश्चयात्मकता, असहायता बोध आदि वर्षों तक मानव मन को विह्वल करते

---

1. डॉ० रामविलास शर्मा, नयी कविता और अस्तित्ववाद, पृ०–67
2. नन्द दुलारे बाजपेयी, हिन्दी साहित्य, बीसवीं शताब्दी, पृ०–165

रहे। विजित देश को मिट्टी में मिलाने की व्यग्रता अपने–अपने दल को सुपुष्ट करने का आग्रह आदि को देखकर लगा कि मानव समाज अपने तिक्त अनुभवों से ज्ञान लाभ करने वाला नहीं। सन् 1946 में 'संयुक्त राष्ट्र संघ' की स्थापना भी मानव समाज को आश्वस्त न कर सकी। इंडोनेशिया, काश्मीर, इंडोचीन, कोरिया आदि स्थानों पर आगामी महायुद्ध की चौकाने वाली चिनगारियाँ फूट निकलीं जिससे समस्त मानव समुदाय पुनः–पुनः त्रस्त होता रहा।

"साहित्य अंततः साहित्य ही ही– वह परिस्थितियों के सहित अथवा सम्मिलित प्रभाव की अभिव्यंजना है।"[1] काव्य में व्यक्त अनुभूति संश्लिष्ट रूप में तत्कालीन समय और समाज की परिस्थितियों का अंकन करती है, जिससे सामान्य बुद्धि के लिए उसकी ग्राह्यता सीमित होती है।

कालान्तर में विश्व–मानचित्र पर ऐसी बातें, घटनाएँ और शक्तियाँ उपस्थित हुयी जिन्होंने भयभीत मानव हृदय में आशा को संचारित करने का महान कार्य किया। स्टालिन की मृत्यु के बाद रूस ने अपनी कठोर और निषेधात्मक नीति को बदल दिया। संयुक्त राष्ट्र संघ में तटस्थ राष्ट्रों की संख्या बढ़ती गयी, जिनके प्रयत्न से तीसरे विश्व युद्ध का खतरा घटता गया। आपसी, सलाह, परामर्श आदि द्वारा विश्व के प्रश्नों को हल करने का आग्रह प्रबल होने लगा भारत के प्रधानमंत्री जैसे महान व्यक्तियों से अनेक देश के नेताओं ने प्रेरणा ग्रहण की और विश्व–शान्ति को बनाये रखने के लिए ये सब प्रतिबद्ध हो गये। विभिन्न देश के नेताओं के बीच नैकट्य का सम्बन्ध होने लगा। निःशस्त्रीकरण की चर्चा जोरों पर होने लगी। संसार का बहुमत शान्ति के पक्ष में इतना प्रबल हो गया कि कोई भी उसको कुचलने का साहस न कर सका। "आस्था के इस नवजागरण में प्रत्येक देश के नये चिन्तक साहित्यकार या कलाकार का अपना योग होगा यह असन्दिग्ध है क्योंकि वह बहुत अंशों में

---

1. डॉ० नामवर सिंह, छायावाद, पृ०–71

मानव मनोजगत का सूक्ष्म पर्यवेक्षक, संग्रह, घटक या निर्माता रहा है।"[1] पं० जवाहर लाल नेहरु ने सह–अस्तित्ववाद के पाँच शीलों को संसार के सामने रखा, जिनमें देश–देश की विभिन्न एवं विरोधी सामाजिक व्यवस्था, सरकारी नीति और आर्थिक संगठन के बावजूद भी एक–दूसरे के गार्हिक प्रश्नों में हस्तक्षेप न करके विश्व शान्ति को बनाये रखने का आग्रह किया गया। जिसमें "भावनाओं की स्वतन्त्र सत्ता में कलाकार की आस्था आरोपित अथवा वाह्यतः प्रेरित मतवादों से भिन्न आत्मसूचित तत्वों से प्रेरित होने लगी। त्वैयक्तिक स्वतन्त्रता को जहाँ वह सामाजिक आवश्यकता समझता था वहीं भावनाओं की स्वतन्त्रता में वह अपनी आत्म–आस्था के प्रति अधिक निष्ठावान होने का प्रयास करने लगा।"[2]

दूसरी ओर प्रबल राष्ट्र इसकी ओर मौखिक सहमति प्रकट करते हुए भी नैपथ्य में एक–दूसरे को नष्ट–भ्रष्ट करने की तैयारी में संलग्न थे। उन अक्षम्य साहसियों ने अणु परीक्षण परम्परा द्वारा वायुमंडल को विषैला और कलुषित कर दिया। इस प्रकार एक ओर परिस्थिति और भविष्य, आशा और आस्था को प्रेरित करने वाला लगता था, तो दूसरी ओर उन पर तुषारापात करने वाला भी। नयी कविता में मिलने वाला आस्था–अनास्था तथा निराशा और कुण्ठा का स्वर, वादमुक्तता तथा मानवीय मूल्यों को प्रतिष्ठित करने का आग्रह उसे अन्तर्राष्ट्रीय क्षितिज प्रदान करता है।

सुधारवादी आन्दोलनों की लम्बी शृंखला के बावजूद स्वतन्त्र भारत की सामाजिक स्थिति में संतोषजनक परिवर्तन नहीं आया। वर्णभेद तथा अस्पृश्यता की भावना ने भारतीय समाज को अब भी उद्वेलित कर रखा था। गांधी जी के अथक परिश्रम के बावजूद भी हरिजनों का उद्धार न हो सका। धार्मिक स्थानों तथा मंदिरों का दरवाजा अब भी उनके लिए बन्द था। दहेज प्रथा, बाल विवाह,

---

1. सम्पादन (जगदीश गुप्त, रामस्वरूप चतुर्वेदी, विजय देव नारायण साही), नयी कविता : सैद्धान्तिक पक्ष (खण्ड–एक), पृ०–34
2. डॉ० लक्ष्मीकान्त वर्मा, नयी कविता के प्रतिमान, पृ०–45

बेमेल विवाह आदि सामाजिक बुराइयाँ अभी मौजूद थीं। जाति और धर्म के नाम पर समाज को बाँटने का प्रयत्न लोगों द्वारा अब भी हो रहा था। पूँजीवादी दबाव के चलते समाज का मध्य वर्ग अत्यन्त दयनीय स्थिति में पहुँच गया था। मध्य वर्ग और उच्च वर्ग के लोगों के बीच आर्थिक असमानता की खाई अत्यन्त गहरी होती जा रही थी। मध्य वर्ग को अपना भविष्य अन्धकारमय और अनिश्चित दिखायी पड़ने लगा, जिसके कारण उनमें निराशा, निष्क्रियता, क्षणवाद जैसी प्रवृत्तियाँ पनपने लगीं। जो कालान्तर में सम्पूर्ण देश में संघर्ष की पृष्ठभूमि निर्मित करने में सक्रिय रहीं। 'समाजवाद का साम्यवाद से, किसान मजदूर का जमींदार पूँजीपति से, मुस्लिम लीग का कांग्रेस से, अंग्रेजी शिक्षितों का पुराने अभिभावकों से, अंग्रेजी सभ्यता का भारतीय संस्कृति से, जाति–पाँति का वर्ग भेद से, आस्तिकता का नास्तिकता से संघर्ष चला।'[1] यूरोप के युद्धोत्तर साहित्य में इन भावनाओं को पर्याप्त महत्त्व मिला तथा भारतीय साहित्य और समाज भी इससे अछूता नहीं रह सका। समाज में प्रचलित कुरीतियों के प्रति तीव्र एवं चुभता हुआ व्यंग्य नयी कविता में प्रभूत मात्रा में मिल जाता है। जड़ीभूत मान्यताओं तथा परम्परागत रास्तों को त्याग कर नये पथ की खोज नयी कविता दौर के कवियों को हमेशा अभीष्ठ रहा है तभी तो लीक पर चलना कवि को पसन्द नहीं है–

"लीक पर वे चलें जिनके
चरण दुर्बल और हारे हैं,
हमें तो जो हमारी यात्रा से बने
ऐसे अनिर्मित पन्थ प्यारे हैं।"[2]

महात्मा गांधी के विचार बुद्ध, गीता, ईसा, टालस्टाय इत्यादि से अनुप्राणित थे। साहित्य में गांधी जी के विचारों का बहुत व्यापक प्रभाव पड़ा। पुनर्जागरण ने भारतीय समाज में एक नयी चेतना का संचार किया। गांधी जी की विचारधारा ने आदर्श मानववाद की स्थापना पर बल दिया जिससे राष्ट्रीय जीवन में एक नयी शक्ति का संचार हुआ। साहित्य में भी सर्वमानववादी प्रवृत्तियों को

---

1. डॉ० ओम प्रकाश अवस्थी, नयी कविता : रचना प्रक्रिया, पृ०–8
2. सर्वेश्वर दयाल सक्सेना, प्रतिनिधि कविताएँ, पृ०–87

अभिव्यक्ति मिलने लगी। गांधी ने एक क्रान्तिकारी जीवनचर्या प्रदान की, एक नयी विचार धारा दी, जिसने समस्त राष्ट्र के जीवन दृष्टिकोण को ही बदल डाला। टैगौर की रचनाओं ने हिन्दी साहित्य को बहुत प्रभावित किया, उसने उभरती हुई खड़ी बोली को नया विषय, नये शब्द और नयी भावनाओं की अभिव्यक्ति भी प्रदान की। आगे चलकर अंग्रेजी साहित्य की रोमैन्टिक कविता की भाँति सर्वथा नवीन चिंतन–परम्परा और विचार–शैली के साथ अतिमानवतावाद धार्मिक आदर्शवाद और रूढ़ियों का खण्डन करके सर्वथा नयी भावना के माध्यम से जीवन और जगत की व्याख्या प्रस्तुत करने में सफल हुआ।

देश में चल रहे इन विभिन्न सांस्कृतिक आन्दोलनों का प्रभाव हमारी सामाजिक व्यवस्था पर भी पड़ा और उन रूढ़िवादी परम्परागत प्रचलनों के प्रति एक बौद्धिक अनास्था धीरे–धीरे बढ़ने लगी। इस बौद्धिक संघर्ष की छाया साहित्य में अधिक प्रखर रूप में व्यक्त हुयी। हिन्दी साहित्य में आदर्श और यथार्थ के टकराहट का स्वर भी धीरे–धीरे सुनायी पड़ने लगता है। भारतीय संस्कृति की यह विशेषता रही है कि वह अपने संपर्क में आने वाली अन्य संस्कृतियों को आत्मसात् करने की क्षमता रखती है। इस्लामी संस्कृति जो एक विजेता के रूप में हमारे देश में प्रविष्ट हुयी थी कालान्तर में उसका भी आत्मसातीकरण हमारी संस्कृति में हो गया। "संस्कृति का चिन्तन करने वाले किसी भी विद्वान के सामने यह बात स्पष्ट होनी चाहिए कि संस्कृतियाँ प्रभाव ग्रहण करती हैं, अपने अनुभव को समृद्धतर बनाती है, लेकिन यह प्रक्रिया मिश्रण की नहीं है। संस्कार नाम ही इस बात को स्पष्ट कर देता है।"[1] इस्लामी संस्कृति की ही तरह अंग्रेजी शासन और शिक्षा के प्रचार के साथ उनकी संस्कृति के भी विभिन्न प्रकार के प्रभाव भारत पर पडे। अंग्रेजी संस्कृति के दो रूप थे। एक उसका उपनिवेशवादी रूप था आगंतुक संस्कृति का यह घृणित रूप था। अतः भारतीय जनमानस में उसके प्रति एक प्रकार की घृणा जागृत हो गयी। परन्तु जो अंग्रेजी विद्यालयों में पढ़कर बाहर आये वे अंग्रेजी संस्कृति के

---

1. डॉ० नामवर सिंह, दूसरी परम्परा की खोज, पृ०–87

बाह्य रूप से प्रभावित हुए। अंग्रेजी संस्कृति का दूसरा उदारवादी था। जिन भारतीयों को इंग्लैण्ड जाकर अध्ययन का मौका मिला वे उसकी उदारता, साहसिकता, कर्मण्यता, निर्भयता आदि से प्रभावित होकर आये। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वे अपने देश और देशीय संस्कृति के प्रति अपार प्रेम भी लेकर आये जिसके कारण अंग्रेजी संस्कृति के प्रति अन्ध श्रद्धा के समर्थक वे नहीं बन सके। पश्चिमी संस्कृति के प्रति भारतीय प्रतिक्रिया, घृणा, अन्धानुकरण और विवेकपूर्ण चयन आदि की ही रही थी। भारतीय संस्कृति की इन विशेषताओं को आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने इन शब्दों में उद्घृत किया है– "एक तरफ तो भिन्न विचारों और संस्कृतियों के निरन्तर संघर्ष ने और दूसरी तरफ रक्षणशीलता और श्रेष्ठत्वाभिमान ने इसकी प्रकृति में इन दो बातों को बद्धमूल कर दिया है– एक अपने प्राचीन आचारों से चिपटे रहना पर विचार में निरन्तर परिवर्तित होते रहना और दूसरे धर्मों मतों, संप्रदायों और संस्कृतियों के प्रति सहनशील होना।"[1]

नयी कविता आन्दोलन का दौर मूल्यों के विघटन का दौर था। मूल्यक्षरण के इस दौर में नवीन मूल्यों की खोज पूरी सक्रियता के साथ होने लगी। खण्डित व्यक्तित्व तथा मूल्यवंचित मानव का स्वर हम नयी कविता में स्पष्ट रूप से सुनते हैं। जिन्होंने किसी भी जीवनदर्शन पर आँख मूँदकर विश्वास नहीं किया, उन्हीं की मानसिक शान्ति और आस्था बची रही। ऐसे ही सन्तुलित विचारधारा के लोगों द्वारा पश्चिमी और पूर्वी मूल्यों के सामंजस्य से नवीन मानवीय मूल्यों को प्रतिष्ठित करने का प्रयास हुआ। दुर्भाग्यवश हिन्दी कविता के क्षेत्र में ऐसे लोगों की संख्या अत्यन्त सीमित थी।

नयी कविता की साहित्यिक पृष्ठभूमि के रूप में हम हिन्दी साहित्य की छायावादोत्तर काव्य–धाराओं को ले सकते हैं। छायावाद जहाँ हिन्दी काव्य में भावुकता, कल्पना विलास, यथार्थ से अलगाव तथा प्रकृतिपरक कविताओं की बहुलता लेकर आया जिसे आचार्य शुक्ल ने अपने इतिहास में 'मधुचर्या' कहा तथा जो सांस्कृतिक चेतना की दृष्टि से भी समृद्ध था। "वहीं" छायावादोत्तर

---

1. आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, हिन्दी साहित्य की भूमिका, पृ०–16

काव्य के विविध रूपों में समग्र सांस्कृतिक चेतना के स्थान पर जन जीवन और उसकी विशेषताओं की पहिचान तीव्रतर होती है। यों भारत के भौगोलिक राजनैतिक नक्शे में से भारत जन उभरते दिखते हैं।''[1] हिन्दी साहित्य जगत में जिस गर्मजोशी से प्रगतिवाद का स्वागत हुआ शायद अन्य काव्य प्रवृत्ति का नहीं हुआ होगा प्रगतिवाद पर उस समय के चोटी के प्रायः सभी राजनीतिज्ञों समाजसुधारकों, साहित्यकारों, विचारकों एवं अन्य बुद्धिजीवियों की सक्रिय सहानुभूति उस पर रही। ऐसा विश्वास किया जाने लगा कि भक्तिकाल के बाद ऐसा व्यापक आन्दोलन भारतीय साहित्य में घटित नहीं हुआ। सुदृढ़ आस्थावादी जीवन दर्शन और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के कारण प्रगतिवाद को व्यापक लोकप्रियता मिली। हिन्दी काव्य में यथार्थ की जो चेतना उत्पन्न हुई उसके मूल में वैज्ञानिक विकास और उससे प्रभावित जीवन की परिस्थिति रही है।

''मनुष्य के मूल्य जितनी तेजी से परिवर्तित हो रहे थे, विज्ञान जिस क्षिप्तता से अनुसंधानों में प्रवृत्त था, मानव मूल्य कितना घट गया था, मनुष्य भीड़ में भी अकेला रहा गया इस सबका अनुभव जैसे छायावादियों को था ही नहीं वे या तो श्रद्धा इड़ा के साथ संयोग जोड़ रहे थे या फिर रहस्य बन जाना चाहते थे, प्रकृति के जिस रूप को पंत ललचायी आँखों से देख रहे थे, वय के बढ़ने के साथ वह मात्र उद्दीपन का ही काम कर रहा था इसलिए मनुष्य जाति की सही अभिव्यक्ति हो ही नहीं पा रही थी।''[2] समय और तत्कालीन परिस्थितिजन्य दबावों और प्रश्नों को प्रगतिवादियों और प्रयोगवादियों ने गहराई से अनुभव किया और उन्होंने समय के सच को पूरी बेबाकी से अभिव्यक्ति दी। फिर भी प्रगतिवादी काव्य में विचारों की अस्पष्ट व्याख्या और कलात्मक ह्रास के लक्षण प्रकट होने लगे थे, जिससे प्रगतिवाद को दीर्घ जीवन नहीं मिल सका। प्रयोगवादी कवि काव्य को अन्वेषण का विषय मानकर काव्य सत्य को प्राप्त करने में व्यस्त रहे जिससे प्रयोगवादी काव्य वैयक्तिक हो गया और प्रयोगवादी

---

1. डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी, आधुनिक कविता–यात्रा, पृ०–5
2. डॉ० ओम प्रकाश अवस्थी, नयी कविता : रचना–प्रक्रिया, पृ०–28

कविता समाज से कट गयी अर्थात् समाज के सच को पूरी गहराई से व्यक्त नहीं कर पायी।

छायावादोत्तर हिन्दी कविता का पर्यवसान प्रगति और प्रयोग से होते हुए 'नयी कविता' में हुआ। प्रगति और प्रयोगवादी दौर की कविता की कमजोरियों से नयी कविता के कवि सचेत थे। प्रगतिवाद की कुछ विशेषताओं से नयी कविता प्रभावित भी हुई। प्रगतिवाद की ही तरह सामाजिक चेतना 'नयी कविता' में भी दृष्टिगोचर होती है। प्रयोगवादी काव्य की असामाजिकता और वैयक्तिकता को नयी कविता ने सामाजिकता और व्यापक सामाजिक बोध से जोड़ा। आशा और आस्था के स्वरों को भी नयी कविता ने क्षीण नहीं होने दिया। नयी कविता ने काव्य–भाषा को जनभाषा के निकट खड़ा कर दिया और सामान्य घटनाएँ तथा जनसामान्य के कष्टों और अनुभूतियों को सशक्त स्वर दिया। यथार्थ जीवन की मानवीय अनुभूतियों को अभिव्यक्ति देने की ओर तथा यथार्थ जीवन से ही अप्रस्तुतों को अपनाने की प्रवृत्ति को नयी कविता ने आगे बढ़ाया। लोकोन्मुखता नयी कविता की प्रमुख विशेषता रही है। जनसामान्य के सुख–दुख को लेकर वह उसके समनान्तर ही मुखरित होती रही है। जन–जीवन में व्यवहृत कोमल लघु शब्दों के चयन करने की वैसी ही प्रवृत्ति उसके गीतों में भी दीख पड़ती है। जो नयी कविता को 'जन की कविता' की राह पर ले जाती है।

(ख) नयी कविता का स्वरूप :

नयी कविता अब हिन्दी–काव्य में एक मान्यता प्राप्त काव्य–धारा के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी है। इसकी उपलब्धियों को अब व्यापक स्वीकृति मिल रही है। परन्तु इसकी विभिन्न उपलब्धियों तथा नये–नये आयामों पर बहस अब भी चल रही है, जो नयी कविता की विस्तृत भावभूमि की ओर संकेत करती है। नयी कविता के वास्तविक स्वरूप पर यथोचित रूप में अभी तक प्रकाश नहीं पड़ सका है। अतः नयी कविता के स्वरूप के बारे में एक निश्चित और स्पष्ट दृष्टिकोण विकसित करने की आवश्यकता है। नयी कविता के प्रति आलोचकों का दृष्टिकोण प्रायः अस्पष्ट और पूर्वाग्रह से ग्रस्त होने के कारण उसे हमेशा

विवादों के घेरे में रहना पड़ा है। इसकी तर्कसंगत व्याख्या तथा मूल्यांकन भी नहीं हो सका है। किसी नयी काव्य प्रवृत्ति के उचित मूल्यांकन के विषय में गजानन माधव मुक्तिबोध का कहना है– "जब कभी कोई नयी काव्य प्रवृत्ति अथवा साहित्य प्रवृत्ति अवतरित होती है, कला के मूलतत्वों के सम्बन्ध में, सिद्धान्तों के बारे में बहस शुरु हो जाती है। यदि इस विचार विनिमय को वास्तववादी होना है, तो उसे एक साथ दो काम करने होंगे– एक तो अपने युग विशेष की प्रवृत्तियों को समझना होगा, दूसरे नयी काव्य प्रवृत्ति के स्वरूप को हृदयंगम करना होगा।"[1] नयी कविता अपनी मूल चेतना में विद्रोही प्रवृत्ति की है, जिसके कारण वह आलोचकों की यथोचित सहानुभूति नहीं प्राप्त कर सकी। क्योंकि रुढ़िबद्ध परम्पराओं और मान्यताओं से विचलन सहज रूप में ग्राह्य नहीं हो सकता है।

"कोई भी प्रवृत्ति निर्मूल नहीं होती। उसकी मूल भावना सदैव सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तरों में निहित होती है। उसके यथार्थ का आग्रह स्वयं इतना सशक्त होता है कि उससे बचना उसकी यथार्थ सत्ता को अस्वीकार करना है। आज की नयी कविता की सशक्त प्रवृत्ति को जो इस दृष्टि से न देखकर केवल अपनी दृष्टि से सम्मतियाँ दे देते हैं वे यही नहीं कि उसकी मूल भावना के प्रति न्याय नहीं करते वरन् पूर्वाग्रहों द्वारा परिचालित होकर सर्वथा असंगत सत्यों का पृष्ठपोषण करते हैं। नयी कविता कोई आन्दोलन नहीं है– वह एक साहित्यिक प्रवृत्ति है, जिसमें आज का भावबोध अधिक व्यंजना के साथ अभिव्यक्ति पाता है।"[2] आज की नयी कविता के भीतर जो मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया लक्षित होती है, वह निःसन्देह छायावादी या प्रगतिवादी अथवा उसके पूर्व की काव्य प्रक्रिया से बिल्कुल भिन्न है। रोमैन्टिक कवियों की भाँति, आवेशयुक्त होकर, आज का कवि भावों के अनायास, स्वच्छन्द अप्रतिहत प्रवाह में नहीं बहता। इसके विपरीत वह किन्ही अनुभूत मानसिक प्रतिक्रियाओं को ही व्यक्त करता है।

---

1. गजानन माधव मुक्तिबोध, नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबन्ध, पृ०–1
2. लक्ष्मीकान्त वर्मा, नयी कविता के प्रतिमान, पृ०–2

नयी कविता वादमुक्तता तथा 'लघुमानव' के महत्व की प्रतिष्ठा की आग्रही है। इस प्रवृत्ति से यह अवश्य हुआ की सामान्य मनः स्थितियों को अभिव्यक्त करने वाली कुछ ऐसी कविताएँ लिखी गयी जो सचमुच नयी थीं। वे मध्य–वर्गीय व्यक्ति के मन की जटिलताओं को अधिक अपनेपन के साथ प्रकट करती हैं। नयी कविता जन सामान्य के जीवन तथा मानव जीवन की अत्यन्त सामान्य सी लगने वाली घटनाओं तथा जीवनानुभवों को अपना विषय बनाती है। खेत–खलिहान तथा ग्रामीण परिवेश और वहाँ के जीवन में व्याप्त जटिलता को नयी कविता ने बहुत ही खूबसूरती से रेखांकित किया है। मानव जीवन को सम्पूर्णता में देखने की विराट तथा तेजस्वी दृष्टि नयी कविता को वैश्विक चेतना के धरातल पर प्रतिष्ठित कर देती है। प्रगतिवाद जहाँ घोषित रूप से किसानों–मजदूरों के साथ खड़ा दिखायी देता है, नयी कविता वहाँ चुपचाप मामूली आदमी की सामान्य जीवन स्थितियों का चित्रण करती नजर आती है। अब साधारण चरित्र की विशिष्टता को नहीं, नयी कविता उसके साधारण जीवन को ही रेखांकित करने का प्रयत्न करती है। नयी कविता के प्रतिनिधि कवि रघुवीर सहाय ने इसको यूँ कहा है–

"हमको तो अपने हक सब मिलने चाहिए
हम तो सारा का सारा लेंगे जीवन
'कम से कम' वाली बात न हमसे कहिए"[1]

नयी कविता जीवन को संपूर्णता में रेखांकित करती चलती है, वह केवल जीवन के विशिष्ट या उदात्त अंशों तक ही अपनी व्याप्ति को सीमित नहीं रखती। प्रत्येक युग की कविता अपने पूर्ववर्ती युग की कविता से नयी होकर ही अपना अलग अस्तित्व सिद्ध करती है। अतः इस दृष्टि से देखने पर यद्यपि 'नयी' शब्द में अतिव्याप्ति दोष है, फिर भी 'नयी कविता' नाम हिन्दी–कविता के एक विशेष स्वरूप के लिए प्रचलित हो गया है। इस प्रकार 'नयी कविता' नाम एक मान्य काव्यधारा के रूप में हिन्दी साहित्य में प्रतिष्ठित हो चुका है। अतः

---

1. रघुबीर सहाय : प्रतिनिधि कविताएँ, पृ०–28
(काव्य संकलन, सीढियों पर धूप में)

नयी कविता के नामकरण की बहस में न पड़कर उसके वास्तविक स्वरूप का ही मूल्यांकन करना अधिक उचित है।

नयी कविता को आज की मानव विशिष्टता से उद्भूत उस लघुमानव के लघु परिवेश की अभिव्यक्ति कहा गया है। जो एक ओर आज की समस्त कटुताओं के बीच अपने व्यक्तित्व को भी सुरक्षित रखना चाहता है और विशाल जन समूह की धारा में बहने के साथ–साथ अपने अस्तित्व के यथार्थ को भी स्थापित करना चाहता है। दायित्व निर्वहन के प्रति भी वह पूर्णतः सचेष्ट है। मुक्तिबोध ने लिखा है कि– 'नयी कविता, वैविध्यमय जीवन के प्रति आत्मचेतस व्यक्ति की संवेदनात्मक प्रतिक्रिया है।'[1]

साहित्य के क्षेत्र में जब किसी नये 'वाद' का उद्भव होता है तो प्राथमिकता के तौर पर उसका लक्ष्य होता है एक दृढ़ संकल्प के साथ पूर्वागत विचारधारा और परम्परा पर आधारित अनुकरणात्मकता की उत्तरोत्तर निर्जीव होती हुयी वृत्ति को नवागत संदर्भों की ओर मोड़ देना। जितनी दूर तक रुढ़िग्रस्तता इस कार्य में कठिनाई पहुँचाती है उतनी दूर तक विद्रोह आवश्यक हो जाता है। नयी कविता ने इस कार्य को विविध प्रकार से सम्पन्न किया है। जो प्रतीक औचित्यहीन हो चुके थे, उन्हें पूर्ण ऊर्जस्विता प्रदान कर और यथार्थ अनुभूति सम्पन्न प्रतीकों द्वारा स्थानान्तरित कर दिया, संकीर्ण और क्षुद्र मनोवृत्तियों को पूर्णतया नकार दिया। श्रेष्ठ और उदात्त काव्य सृजन के लिए इन सीमाओं का अतिक्रमण अत्यन्त आवश्यक हो जाता है क्योंकि 'यह कला–सृजन नये सन्दर्भों और धरातलों के अभाव में केवल जड़ परम्परा की रुढ़ियों की प्रेत–काया मात्र बनकर जीवित रहती है।'[2] नयी कविता की कुछ विशेषताएँ ऐसी हैं, जो परम्परागत विशेषताओं से काफी अलग हैं, जिनके कारण नयी कविता अपनी एक स्वतन्त्र पहचान निर्मित करती है। जो नयी कविता को एक नूतन भावबोध के धरातल पर प्रतिष्ठित करती है।

---

1. मुक्तिबोध, नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबन्ध, पृ०–12
2. लक्ष्मीकान्त वर्मा, नयी कविता के प्रतिमान, पृ०–31

नये युग की नवीन चेतना ने नयी कविता को जन्म दिया। अतः नयी कविता काव्यशास्त्रीय मानदण्डों पर प्रायः खरी नहीं उतरती है। प्रगतिशील साहित्य के बदलते हुए स्वरूप के आधार पर ही उसके सिद्धान्त निर्मित होते हैं। अतः नयी कविता का मूल्यांकन पूर्णतः परम्परागत प्राचीन काव्यशास्त्रीय सिद्धान्तों के आधार पर करना न्यायोचित नहीं लगता है। क्योंकि 'पुरानी कविता के उपमान मैले हो गये थे। नयी कविता में नये उपमानों की जरूरत हुई। कवि प्रेमिका के लिए नया उपमान ढूँढ लाया। कलँगी बाजरे की।[1] नये प्रतिमानों की स्थापना के लिए आचार्य शुक्ल का महत्व असन्दिग्ध है। अपनी अर्थ मीमांसा में सबसे पहले वह 'भाव' की ही व्याख्या करते हैं और यह व्याख्या इतनी सटीक है कि क्षण भर को सारे नये–पुराने प्रतिमान व्यर्थ जान पड़ते हैं। बीसवीं सदी के मनुष्य की मानसिक स्थिति, जीवन के प्रति दृष्टिकोण में आमूल परिवर्तन आ जाने के कारण इतनी दूर तक बदल चुकी है कि वह अपने रागात्मक सम्बन्धों का न तो दार्शनिकीकरण करके सन्तुष्ट हो पाता है, न किसी देवता के चरणों पर आत्म–समर्पण करके मुक्ति लाभ कर पाता है। फलतः उसके हृदय में एक गम्भीर असंतोष अनास्था कुण्ठा, खीझ एवं निराशा की भावना व्याप्त हो जाती है। नयी कविता जो कुछ भी है, वह मानव मन की ग्राह्यता की सीमा से परे नहीं है। 'वह उन प्रबुद्ध विवेवकशील आस्वादकों को लक्षित करके लिखी जा रही है जिनकी मानसिक अवस्था और बौद्धिक चेतना नये कवि के समान है अर्थात् जो उसके समान धर्मा हैं; एक ओर जो पुरानी कविता की अभिव्यंजना–प्रणालियों, शक्तियों और सीमाओं से परिचित हैं और जिनकी परितृप्ति परम्परागत वस्तु और अभिव्यक्ति से नहीं होती या होती है तो सम्पूर्ण रूप में नहीं।[2] नयी कविता का विकास मूलतः बौद्धिक वातावरण में हुआ उसमें यथार्थ चित्रण, शूक्ष्म व्यंग्य का आग्रह तथा शैलियों की विविधता और नूतन

---

1. रामविलास शर्मा, नयी कविता और अस्तित्ववाद, पृ०–56
2. सम्पादन (जगदीश गुप्त, रामस्वरूप चतुर्वेदी, विजय देव नारायण साही), नयी कविता : सैद्धान्तिक पक्ष (खण्ड–एक) पृ०–18

प्रतीकों का विधान हुआ है। नयी कविता में अनुभूति की गहराई पर बल है।

'तारसप्तक' का प्रकाशन अज्ञेय के सम्पादकत्व में सन् 1943 ई० में हुआ। उसमें संकलित नये तेवर की कविताएँ जब सामने आयी तो उनके रूप–शिल्प सम्बन्धी नूतन प्रयोगों को दृष्टि में रखकर कुछ आलोचकों ने इस नयी काव्य–प्रवृत्ति का नाम ही 'प्रयोगवाद' रख दिया। तत्कालीन परिस्थिति के लिए यह नाम उपयुक्त सिद्ध हुआ पर धीरे–धीरे सन् 1950 ई० के बाद काव्य में प्रयोग की प्रवृत्ति में ह्रास होने लगा। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि नयी कविता में नवीन प्रयोग की प्रवृत्ति बिल्कुल समाप्त हो गयी बल्कि यह प्रवृत्ति निरन्तर चलती रही। अपनी कुछ निजी विशेषताओं के कारण 'नयी कविता' प्रयोगवादी कविता को पीछे छोड़ देती है। 'प्रयोगवाद' जहाँ द्वन्द्व और प्रतिक्रिया का काव्य है वही 'नयी कविता' सामंजस्य और संश्लेषण का काव्य है। नयी कविता ने जीवनानुभूतियों को समग्रता में व्याख्यायित किया है और मानव जीवन के प्रति एक सन्तुलित दृष्टिकोण अपनाया है। नयी कविता का विकास सुनियोजित ढंग से एक निस्चित दिशा में होता है जबकि प्रयोगवाद में लक्ष्य से भटकाव की प्रवृत्ति परिलक्षित होती है। 'नये कवियों ने धीरे–धीरे यह समझ लिया कि प्रयोग के लिए प्रयोग व्यर्थ है और नितान्त वैयक्तिकता काव्य के लिए अर्थवह नहीं होती।'[1] सामाजिक यथार्थ से दूर अहं और वैयक्तिक कुण्ठाओं को काव्यबद्ध करना किसी सशक्त काव्यधारा का लक्ष्य नहीं हो सकता। अतः नयी कविता गहरे मानवीय भावबोध और व्यापक जीवन दृष्टि को लेकर आगे बढ़ी। इसमें कोई सन्देह नहीं कि प्रयोगवाद का विकसित स्वरूप नयी कविता है। प्रयोगवादी कवियों और नयी कविता के कवियों के यथार्थबोध एवं युगबोध का मूल स्वर एक ही है। नयी कविता ने प्रयोगवाद की संकीर्णता और कट्टरता से कविता को मुक्त किया। जिससे कविता का स्वच्छन्द विकास सम्भव हो सका और उसका लोकोन्मुखी तथा सहज स्वरूप उभरकर सामने आ सका। इस प्रकार नयी कविता भारत की आजादी के बाद लिखी गयी उन कविताओं को

---

1. डॉ० कान्ति कुमार, नयी कविता, पृ०–18

कहा गया जिसमें कविता की परम्परागत अवधारणा को पीछे छोड़ते हुए नये शिल्पबिधान नये मूल्यों और नये भावबोधों का उद्घाटन किया गया। 'एक नये व्यापक तथा उदार मानवतावादी दृष्टिकोण को विकसित करने का अथक प्रयास–सामान्य जन–जीवन के प्रति एक अनिवार्य लगाव की भावना। मुखौटों की संस्कृति के प्रति आशंका और आक्रोश।[1] नयी कविता में व्यापकता के साथ अभिव्यक्त हुए हैं। नयी कविता अपनी इन्हीं विशेषताओं के कारण अबाध रूप से विभिन्न अवरोधों के बावजूद प्रवाहित हो रही है।

समसामयिक जीवन के प्रति नयी कविता का दृष्टिकोण आशवादी है, यह आज की जीवन चेतना की कविता है। भविष्य के प्रति गहरी आस्था का स्वर भी नयी कविता में विधमान हैं। नयी कविता की इन सभी विशेषताओं को हम उसके वास्तविक स्वरूप के संदर्भ में ग्रहण कर सकते हैं, क्योंकि वस्तुतः ये सभी विशेषताएँ इनके मूल स्वर हैं। इन विशेषताओं को परे रखकर हम नयी कविता के स्वरूप को स्पष्ट नहीं कर सकते। समाज की एक चेतनाशील इकाई होने के कारण नयी कविता मनुष्य को महत्व देती है। मनुष्य या व्यक्ति के माध्यम से लोक जीवन तथा ग्राम जीवन के बहुरंगी चित्रों को पूरी ऊर्जस्विता के साथ अभिव्यक्त करती चलती है।

अपनी प्रकृति में नयी कविता पूर्णतः मानवतावादी कविता है। उसने अपने को पूरी ईमानदारी और साफगोई से शब्दायित किया है। अपनी यथार्थोन्मुखी दृष्टि के कारण नयी कविता को आलोचकों की मार भी झेलनी पड़ी है। लक्ष्मीकान्त वर्मा ने नयी कविता के महत्व को स्वीकार करते हुए कहा है– 'आज के यथार्थ को अभिव्यक्ति पाने का यह एक मात्र साधन है। जब मैं यह कहता हूँ तो मेरा मतलब यह होता है कि आज की तेज गति (High Tempo) काल जीवन के उपयुक्त न तो छायावाद का छन्द वहन कर सकती है न प्रगतिवाद का नारा। नयी कविता का अधिकांश जो इतना बिखरा–बिखरा सा लगता है उसके पीछे मानव–संघर्ष की वह स्थिति है जहाँ रीति, व्यवस्था और क्रम–अनुक्रम की

---

1. डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी, समकालीन हिन्दी साहित्य विविध परिदृश्य, पृ०–43

परम्परागत रूढ़ि को तोड़ना आवश्यक हो जाता है। क्योंकि बिना उसके टूटे नया अनुक्रम, नयी व्यवस्था देश की संगति के साथ अपना योग नहीं स्थापित कर सकती। नयी कविता का बिखराव एक नयी व्यवस्था और नयी अभिव्यक्ति की अकुलाहट है। उसका प्रयोग प्रगति का प्रतीक है और उसका रूखापन अथवा परम्परा से भिन्न उसका व्यापन स्वयं में एक रस की सृजनानुभूति है।'[1] नयी कविता में जो बिखराव, सपाटवयानी तथा गद्यात्मकता और अनुभव की अस्पष्टता है, उसकी पृष्ठभूमि में उसका परिवेश उसका समाज ही उत्तरदायी रहा है। लक्ष्मीकान्त वर्मा का उपर्युक्त कथन नयी कविता के इस स्वरूप को स्पष्ट करने में सहायक है। नयी कविता में जो कुछ आलोच्य है, वह नयी कविता का दोष नहीं वरन् समाकलीन परिस्थिति एवं संदर्भ का ही दोष कहा जा सकता है।

नयी कविता में अपने को व्यक्त करने की अकुलाहट है। थोड़े से कलेवर में अपनी स्मित भाषा में वह सौन्दर्य और विद्रूप दोनों ही तत्वों की अभिव्यक्ति सुचारू रूप से करती चलती है। नयी कविता की इस भूमि को छूते हुए रामधारी सिंह दिनकर के शब्द है– 'अगले युग की कविता मंत्र के समान होगी अर्थात् आकार उसका छोटा होगा किन्तु उसका प्रत्येक शब्द पाठक के भीतर अपार अनुभूतियों के द्वार खोलने वाला होगा। कविता का यह मंत्रत्व क्या होगा इस बात की कुछ झाँकी इलियट की कविताओं में मिलने लगी है। हिन्दी कविता का चरम लक्ष्य इसी मंत्रत्व की प्राप्ति है और राह भी उसकी वही हो सकती है जिस पर आज इतना कोलाहल मचा हुआ है।[2] आज हम देख सकते हैं कि अत्यन्त तीव्रता के साथ नयी कविता का स्वर चहुँ ओर मुखरित हो रहा है क्योंकि उसमें मानवीय गरिमा का तत्व अत्यधिक मात्रा में मौजूद है। यही कारण

---

1. लक्ष्मीकान्त वर्मा, नयी कविता के प्रतिमान, पृ०–3 (पुरोवचन से उद्धृत)
2. रामधारी सिंह दिनकर, काव्य की भूमिका, पृ–68,
(डॉ० ओम प्रकाश अवस्थी, नयी कविता : रचना–प्रक्रिया से उद्धृत, पृ०–83)

है कि नयी कविता सिर्फ 'सामान्य की वस्तु न होकर व्यक्ति सत्य और मानवीय संवेदना का सत्य बनकर अधिक अपनाये के साथ उभरी है।'[1]

इस प्रकार नयी कविता में हमें समसामयिकता, आधुनिक युगबोध और उसकी यथार्थ अभिव्यक्ति एवं भावानुकूल शिल्प के दर्शन होते हैं। उपरोक्त तथ्यों के विवेचन से नयी कविता के वास्तविक स्वरूप के पकड़ने का प्रयास किया जा सकता है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि नयी कविता अपनी कतिपय त्रुटियों और खामियों के बावजूद अपनी विशिष्ट प्रवृत्तियों एवं उपलब्धियों के कारण लोकोन्मुखी और लोकग्राह्य बनी हुयी है।

(ग) नयी कविता का उद्भव एवं विकास :

हिन्दी काव्य के क्षेत्र में नयी कविता एक नूतन काव्यधारा के रूप में प्रस्फुटित हुई। हिन्दी काव्य के क्षेत्र में नयी कविता के उदय ने व्यापक एवं तीव्र वाद–विवाद को जन्म दिया। वाद–विवाद का कारण नयी कविता द्वारा जीवन–जगत तथा काव्य के प्रति परम्परा से हटकर नये दृष्टिकोण का अपनाया जाना था। कविता की रचना प्रक्रिया के क्षेत्र में नयी कविता न सिर्फ सम्पूर्ण क्रान्ति की वाहक बनी बल्कि साहित्य चिंतकों तथा आलोचकों को नये सिरे से सोचने के लिए बाध्य किया। प्रायः हर नये विचार या आन्दोलन को असहमति और विरोध का सामना करना पड़ता है। अतः नयी कविता दौर के आन्दोलन को भी इस अग्नि परीक्षा से होकर गुजरना पडा। नयी कविता पर सम्यक् रूप से दृष्टिपात करने से पहले उसके उद्भव एवं विकास की परिस्थितियों पर विचार कर लेना आवश्यक है।

नयी कविता युग का सम्बन्ध 'नयी कविता' पत्रिका से है जो इलाहाबाद में आरंभ हुई। 'आलोचना' त्रैमासिक के सम्पादक मण्डल (धर्मवीर भारती, रघुवंश, व्रजेश्वर वर्मा, विजय देवनारायण साही) की एक बैठक में, जो धर्मवीर भारत के इलाहाबाद स्थिति आवास पर आयोजित थी। उसके प्रकाशक ओम प्रकाश भी मौजूद थे। वहाँ यह निर्णय हुआ कि इलाहाबाद के युवा लेखकों के सहकारी

---

1. लक्ष्मीकान्त वर्मा, नयी कविता के प्रतिमान, पृ० 2–3 (पुरोवचन से उद्धृत)

प्रकाशन 'कविता प्रकाशन' की ओर से 'नयी कविता' शीर्षक एक अर्द्ध–वार्षिक पत्रिका का प्रकाशन किया जाय। सम्पादन का दायित्व जगदीश गुप्त और रामस्वरूप चतुर्वेदी को दिया गया। व्यवस्था और वितरण का जिम्मा राजकमल प्रकाशन पर था। सारी योजना व्यवस्था के स्तर पर आकस्मिक थी। पर रचनात्मक स्तर पर उतनी आकस्मिक नहीं। पिछले कुछ समय से नयी कविता की चर्चा–परिचर्चा एक काव्य आन्दोलन के रूप में इलाहाबाद में और बाहर भी चल रही थी। यह प्रकाशन योजना उसकी स्वाभाविक परिणति थी।

"1953 की फरवरी में नये लेखकों की संस्था 'परिमल' की ओर से नयी कविता विषयक एक गोष्ठी का इलाहाबाद विश्वविद्यालय के 'ओरिएंटल हाल' में आयोजन हुआ। भारतभूषण अग्रवाल, जगदीश गुप्त और रामस्वरूप चतुर्वेदी ने नयी कविता के विविध पक्षों पर उसमें पर्चे पढ़े..... एक पत्र व्रजेश्वर वर्मा का छपा 'नयी कविता', श्रोता के दृष्टिकोण से।' भारतभूषण अग्रवाल द्वारा पठित निबंध 'नयी कविता में रूप–विधान और वस्तु तत्त्व' भी इसी अंक में छपा। रामस्वरूप चतुर्वेदी का गोष्ठी में पठित निबन्ध 'नयी कविता में मुक्त छंद' 'कल्पना' पत्रिका के अगस्त 53 अंक में प्रकाशित हुआ।"[1]

"नयी कविता' पत्रिका का 1954 में प्रकाशन लघु पत्रिकाओं की एक श्रृंखला के क्रम में है। 'नये पत्ते' 'नयी कविता' 'निकष' 'प्रतिमान जैसी पत्रिकाएँ परिमल वृत्त के लेखकों द्वारा आयोजित हुईं।"[2]

नयी कविता का उद्भव एकाएक या अचानक हुआ हो, ऐसा नहीं है। छायावाद के पतन के उपरान्त जो काव्य प्रवृत्तियाँ उभरकर सामने आयी उनमें प्रगतिवाद और प्रयोगवाद विशेष उल्लेखनीय है। नयी कविता प्रगतिवाद अथवा प्रयोगवाद से सम्बन्धित है अथवा नहीं। अगर सम्बन्धित है तो क्यों और कैसे? यह प्रश्न हिन्दी साहित्य के समीक्षकों और चिंतकों को बराबर परेशान करता रहता है। कुछ समीक्षक पूरे छायावादोत्तर काव्य को नयी कविता के भीतर

---

1. डॉ० रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, पृ० 233–34
2. वही, पृ०–234

समाहित करना चाहते हैं। इन समीक्षकों में गिरिजाकुमार माथुर और बालकृष्ण राव प्रमुख हैं। 'ये दोनों छायावाद के पश्चात् रचित समस्त काव्य–कलाप नयी कविता के वृत्त में समाहित करते प्रतीत होते है।'[1] जहाँ तक नामकरण का प्रश्न है तो "नयी कविता" नाम अज्ञेय का ही दिया हुआ है। अपनी एक रेडिया–वार्ता में उन्होंने इस पद का पहले प्रयोग किया था, जो बाद में 'नये पत्त' के जनवरी–फरवरी 53 अंक में 'नयी कविता' शीर्षक से प्रकाशित हुई।"[2]

हिन्दी काव्य में सन् 1936 तक आते–आते छायावाद का पतन होने लगा तथा यहीं से एक नवीन प्रकार की कविता धारा का आरम्भ होता है। यह नये प्रकार की कविता छायावादी कविता से भिन्नता लिए हुए थी। निःसन्देह छायावादोत्तर काल की इसी कविता को 'नयी कविता' नाम दिया गया। 'नयी कविता से अनेक प्रकार की कविता का बोध होता है। किसी समय मार्क्सवाद से प्रभावित प्रगतिशील कविता को नयी कविता कहा जाता था। प्रगतिशील कविता धारा के बाद प्रयोगवादी कविता का बोलबाला रहा। इसे अधिकतर प्रयोगवादी ही कहा जाता था। नयी कविता प्रयोगवाद से भिन्न होकर एक रूढ़ अर्थ में तब प्रयुक्त होने लगी जब 1954 में इलाहाबाद से 'नई कविता' नामक संकलन प्रकाशित होने लगा।[3]

नयी कविता के प्रथम अंक के प्रकाशन के बाद साहित्य जगत में उसकी तीखी प्रतिक्रियाएँ हुईं। निराला जी की कविता 'जुही की कली' का एक सामूहिक रूपान्तर सामने आया। कवियों, विद्वानों, समीक्षकों और पाठकों में कविता के इस नये स्वरूप को लेकर आक्रोश, विभ्रम और सहानुभूति व्याप्त हो गयी। 'ध्यान में रखने की बात है कि नयी कविता के अभ्युदय और प्रभाव के विस्तार के साथ ही काव्य सौन्दर्य के सम्बन्ध में प्रश्न उठाये गये। ऐसा हमेशा होता आया है कि नयी काव्य प्रवृत्ति के उदय के साथ ही, काव्यात्मक प्रभाव के

---

1. डॉ० कान्ति कुमार, नयी कविता, पृ०–2
2. रामस्वरूप चतुर्वेदी, हिन्दी साहित्य और संवेदना का विकास, पृ०–234
3. रामविलास शर्मा, नयी कविता और अस्तित्ववाद (भूमिका से उद्धृत)

सिद्धान्तों–साहित्य सिद्धान्तों की पुनर्व्याख्या हो। किन्तु नयी कविता वालों ने काव्य सौन्दर्य सम्बन्धी जो व्याख्या की भले ही, चाहे जितनी लचीली बना ली जाय, उन सिद्धान्तों का प्रयोग करते समय ऐसी विशेष भावनाओं और उनकी अभिव्यक्ति को असुन्दर समझा गया, जिनका सम्बन्ध ह्रासग्रस्त सभ्यता के विरोध से है।'[1]

हिन्दी काव्य में छायावाद के अवसान के बाद कई काव्य–प्रवृत्तियाँ उभर कर सामने आयीं जिनमें प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, प्रपद्यवाद (नकेनवाद) एवं नयी कविता आदि प्रमुख हैं। किन्तु यदि यह कहा जाय कि नयी कविता अन्य सभी प्रवृत्तियों को अपने में समाहित कर लेती है तो अतिश्योक्ति नहीं होगी। नयी कविता अन्य सभी काव्य प्रवृत्तियों में समन्वय स्थापित करती है। आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी ने भी नयी कविता के विस्तृत क्षेत्र को स्वीकार करते हुए कहा है– "स्वच्छन्दतावादी या छायावादी हिन्दी–कविता के पश्चात् कुछ नयी प्रवृत्तियाँ भी कविता में आयीं और आ रही हैं। इनका विवेचन नयी कविता के नाम से किया जाता है। छायावादोत्तर हिन्दी कविता में कविता की अन्य अनेक शाखाएँ हैं, पर धीरे–धीरे वे शाखाएँ क्रमागत धारा के साथ बहुत कुछ अनुस्यूत हो गयी है।"[2]

प्रथम प्रयोग की दृष्टि से 'नयी कविता' और 'नया कवि' शब्दों का प्रयोग चाहे जब हुआ हो परन्तु इधर के कुछ वर्षों में यह शब्द व्यापक रूप से प्रचलन में आया। वाद की सीमा से मुक्त होने के कारण 'नयी कविता' शब्द प्रयोगवाद की अपेक्षा अधिक लोक–ग्राह्य हुआ। "आज की नयी कविता के मूल तत्व में उस नये तत्व की चिर विकसित प्रवृत्ति निहित है जिनमें सर्वथा नये आयामों का विकास होता है और उसकी सौन्दर्यानुभूति की बौद्धिक चेतना अभिव्यक्ति पाती है। ऐसा लगता है कि वह प्रवृत्ति आत्मसत्य और वस्तुसत्य के साथ–साथ परम्परा के जीवन्त तत्वों की सर्वथा नयी परिप्रेक्षित दृष्टि प्रदान करके उस स्तर

---

1. मुक्तिबोध, नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबन्ध, पृ०–15
2. डॉ० मंजु दूबे, नयी कविता में युगबोध, पृ०–28

को अन्वेषित करने में प्रयासशील है जिसमें संस्कार और यथार्थ का उचित योग मिल सके।"[1]

कुछ विद्वानों ने 'नयी कविता' को प्रयोगवाद का विकास माना है। प्रयोगवादी कविताओं को भी धीरे–धीरे 'नयी कविता' माना जाने लगा। इस प्रकार नयी कविता का फलक अत्यंत विस्तृत होता चला गया। नयी कविता का नयापन अधिकांशतः पूर्ववर्ती कविताओं से 'भिन्नता' में ही है और हर युग की कविता अपने पूर्ववर्ती युग से कुछ न कुछ भिन्न अथवा 'नयी' होती है। इस दृष्टि से 'नयी कविता' नाम में हम अतिव्याप्ति दोष की झलक पाते हैं। "नयी कविता में स्वयं कई भावधाराएँ हैं, एक भाव–धारा नहीं। इनमें से एक भावधारा में प्रगतिशील तत्व पर्याप्त हैं। उनकी समीक्षा होना बहुत आवश्यक है। मेरा अपना मत है आगे चलकर नयी कविता में प्रगतिशील तत्व और भी बढ़ते जायेंगे और वह मानवता के अधिकाधिक समीप आयेगी।"[2]

ऐतिहासिक दृष्टि से नयी कविता का उद्भव सन् 1951 ई० से माना जाता है, किन्तु किसी भी साहित्यिक धारा अथवा प्रवृत्ति को किसी सीमा रेखा में आबद्ध नहीं किया जा सकता है, क्योंकि किसी साहित्यिक प्रवृत्ति का जन्म आकस्मिक रूप से नहीं हो जाता है। डॉ० ओम प्रकाश अवस्थी का मानना है कि 'प्रयोगवादी काव्यधारा का नामकरण संस्कार है नयी कविता, यह उसका विकास न होकर उपनाम है। छायावादी अमूर्त चिन्ता की मुक्ति का प्रयास है प्रयोगवाद तथा प्रगतिवादी स्थूलता, राजनैतिक मण्डन से हटकर नये मार्गों का अन्वेषण है तारसप्तक (1943)।"[3]

छायावादोत्तर कविता प्रगीत, प्रगति और प्रयोग की धाराओं में प्रवहमान हुयी। प्रगीत और प्रगति विषय की संकीर्णता के कारण उतनी व्यापकता को न प्राप्त कर सकीं जबकि प्रयोगवादी कविता ही आगे चलकर नयी कविता बनकर

---

1. लक्ष्मीकान्त वर्मा, नयी कविता के प्रतिमान, पृ०–31
2. मुक्तिबोध, नयी कविता का आत्मसंघर्ष तथा अन्य निबन्ध, पृ०–10
3. डॉ० ओमप्रकाश अवस्थी, नयी कविता : रचना–प्रक्रिया, पृ०–5

साहित्य क्षेत्र में अवतरित हुई तथा साहित्य का विस्तृत काव्य क्षेत्र घेरकर प्रवहमान हुई। इसमें अपनी पूर्ववर्ती तथा समकालीन धाराओं से चिन्तन के क्षेत्र में जहाँ अलगाव था वहीं लघुमानव और सर्वजनीन भाषा की भी उसमें अवहेलना नहीं थी। 'जब हम किसी भी काव्यकृति को "नयी कविता" के नाम से सम्बोधित करते हैं तो उस "नयी" की पृष्ठभूमि में स्थापित उन मूल तत्वों के वृहत् अर्थ की ओर संकेत करते हैं जिन पर उसकी नवीनता आधारित होती है। यही नहीं कि वे मूल्य ही उसे कविता बना देते हैं वरन् यह कि उन मूल तत्वों में वह नया स्तर भी प्रतिष्ठित है जो आज की विवादग्रस्त स्थितियों के बीच पनपने की चेष्टा कर रहा हैं।[1]

किसी भी काव्य–धारा को एक निश्चित परिभाषा में बाँधना लगभग असम्भव–सा कार्य है। अतः नयी कविता की एक पूर्ण और सर्वग्राह्य परिभाषा दे पाना एक कठिन समस्या है। फिर भी साहित्य मनीषियों ने नयी कविता के उद्भव एवं विकास की परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए उसकी व्यापक सर्जनात्मक क्षमता को परिभाषित करने का प्रयास किया है। प्रसिद्ध छायावादी कवि सुमित्रानन्दन पन्त नयी कविता को परिभाषित करते हुए कहते है– "नयी कविता ने मानव भावना को छायावादी सौन्दर्य के धड़कते हुए पालने से बलपूर्वक उठाकर उसे जीवन समुद्र की उत्ताल लहरों में पेंग भरने को छोड़ दिया है, जहाँ वह साहस के साथ सुख–दुःख, आशा–निराशा के घात–प्रतिघातों में बढ़ती हुई युग–जीवन के आँधी–तूफानों का सामना कर सके, अन्तर्वेदना से मुक्त होकर सामाजिक व्यथा के अनुभवों से परिपक्व बन सके। नयी कविता विश्ववर्चस्व से प्रेरणा ग्रहण करके तथा आज के प्रत्येक पल बदलते हुए युग–पट को अपने मुक्त छन्दों के संकेतों की तीव्रमन्द गति–लय में अभिव्यक्त कर युग मानव के लिए नवीन भाव–भूमि प्रस्तुत कर रही है।"[2] इसी प्रकार

---

1. लक्ष्मीकान्त वर्मा, नयी कविता के प्रतिमान, पृ० 31–32
2. सम्पादन (जगदीश गुप्त, रामस्वरूप चतुर्वेदी विजय देव नारायण साही), नयी कविता : सैद्धान्तिक पक्ष (खण्ड–एक), पृ०–331

प्रसिद्ध छायावादी कवयित्री महादेवी वर्मा ने नयी कविता पर टिप्पणी करते हुए कहा है कि– "आज के विज्ञान की चुनौती को केवल कविता ही स्वीकार कर सकती है। विज्ञान जीवन में उत्साह और उमंग नहीं भरेगा। यह काम तो कविता ही करेगी। नयी कविता आज की नयी समस्याओं के बीच वट–वृक्ष की तरह रहेगी। उसे पराजय मानने की आवश्यकता नहीं। पराजय से बड़ा तो पराजय का विश्वास होता है, पराजय की आशंका होती है। नये युग की कविता मनुष्यता को किसी उज्ज्वल भविष्य और मंजिल तक पहुँचा देगी।"[1] अतः हम कह सकते हैं कि ज्ञान–विज्ञान से बोझिल इस आधुनिक मानव सभ्यता में कविता ही एक ऐसा माध्यम है जो मनुष्य को यन्त्र होने से बचा सकती है और उसे जीवन के प्रति आशावान बना सकती है।

तीसरे सप्तक में नयी कविता के सम्बन्ध में कीर्ति चौधरी ने अपने विचार कुछ यूँ व्यक्त किए है– 'नयी कविता है क्या? आजकल के किसी भी संकलन को उलटने पर दिख जायेगा कि नयी कविता प्रायः नये विषय पर लिखी जाती है या पहले के विषयों को नये ढंग से कहना चाहती है। लयात्मक अथवा लयहीन मुक्तछंद में होती है। समाज और व्यक्ति की जटिल समस्याओं का अंकन करती हुई 'प्रगतिशील' अथवा सिद्धान्त प्रधान होती हुई भी अपने को भावात्मक दिखाना चाहती है। उक्ति सरीखी लगती है। कभी जटिल और कभी बिलकुल सरल हो जाती है। प्रायः शिथिल और कभी–कभी सुनिश्चत गठन वाली होती है। नगर की पृष्ठभूमि में लिखी गयी है पर गँवई–गाँव के शब्दों का उपयोग करती है। भग्नता तथा विषाद को व्यक्त करती है पर आस्था और निष्ठा का संदेश देती है।"[2]

इस प्रकार हम देखते हैं कि अपनी विकास यात्रा में नयी कविता ने मानव जीवन को व्यापकता में रेखांकित किया है। नयी कविता में जीवन का कोई भी

---

1. सम्पादन (जगदीश गुप्त, रामस्वरूप चतुर्वेदी विजय देव नारायण साही), नयी कविता : सैद्धान्तिक पक्ष (खण्ड–एक), पृ०–332
2. सम्पादक, अज्ञेय, तीसरा सप्तक (कविता), पृ०–33

विषय उपेक्षणीय नहीं है। उसमें मानव जीवन के यथार्थ का अनुभूत चित्रण है। जीवन के लघुतम क्षणों, बेहद सामान्य घटनाओं का भी अंकन हुआ है। नयी कविता का सारा दृष्टिकोण आधुनिक है उसमें किसी एक मतवाद का आग्रह नहीं है। उसमें शहर और गाँव तथा विशिष्ट और सामान्य सभी का चित्रण पूरी जीवंतता के साथ हुआ है। नयी कविता युगीन संदर्भों में आधुनिक संवेदन के साथ मानवीय परिवेश के सम्पूर्ण वैविध्य को नये शिल्प में अभिव्यक्त करने वाली हिन्दी की नवीनतम काव्यधारा है।

(घ) नयी कविता के विविध नये पक्ष :

साहित्य के प्रत्येक युग में विभिन्न काव्य प्रवृत्तियाँ एवं साहित्यिक धाराएँ प्रवाहित हुआ करती हैं। सुव्यवस्थित अध्ययन के लिए उन प्रवृत्तियों को एक नाम देना आवश्यक हो जाता है। नयी कविता को हम आधुनिक काल की एक प्रमुख काव्यधारा के रूप में जानते हैं। सन् 1960 के बाद नयी कविता में आन्दोलनों की एक बाढ़ सी आ गयी सन् 1960 के बाद जो हिन्दी कविता लिखी जा रही थी उसे कुछ आलोचक 'साठोत्तरी कविता' नाम देते है और उसे नयी कविता से पूर्णतया अलग मानने के पक्ष में हैं। जो नयी कविता के प्रति आलोचकों की संकुचित दृष्टि को प्रकट करता है। नयी कविता आन्दोलन को प्रतिष्ठित करने वाले प्रमुख कवि एवं समीक्षक डॉ० जगदीश गुप्त सन् 60 के बाद की कविता को भी नयी कविता की श्रेणी में रखते हैं और उसके समानान्तर खड़े हुए स्खलित एवं उद्देश्यहीन विभिन्न काव्यान्दोलनों को सिरे से खारिज करते हुए दिखायी देते है। डॉ० नगेन्द्र ने भी इन्हीं नयी काव्य प्रवृत्तियों की तरफ लक्ष्य करते हुए लिखा है– "सन् 1960 के बाद 'अकविता' का जन्म हुआ और 'युयुत्सा' 'बुभुक्षा' 'दिगंबरता' आदि अत्याधुनिक काव्य प्रवृत्तियाँ हिन्दी कविता के क्षेत्र में उभरने लगीं जिनसे नये कवि भी त्रस्त होकर आस्था और संगीत की पुनः साधना करने लगे। यह वास्तव में अराजकता की स्थिति है।"[1]

---

1. डॉ० नामवर सिंह, कविता के नये प्रतिमान, पृ०–55

डॉ० जगदीश गुप्त ने व्यंगात्मक गंभीरता के साथ 'नयी कविताः किसिम–किसिम की कविता' शीर्षक से कविता के नये–नये नामों की सूची बनायी जो इस प्रकार है–

'सनातन सूर्योदयी कविता, अपरम्परावादी कविता, सीमान्तक कविता, युयुत्सावादी कविता, अस्वीकृत कविता, अकविता, सकविता, अ–अकविता, अभिनव कविता, अधुनातन कविता, नूतन कविता, नाटकीय कविता, एण्टी कविता, निर्दिशायामी कविता, लिंग्वादलमोतवादी कविता, एब्सर्ड कविता, गीत कविता, नवप्रगतिवादी कविता, अन्यथावादी कविता, विद्रोही कविता, क्षुत्कातर कविता, कबीर–पंथी कविता, समाहारात्मक कविता, उत्कविता, विकविता, बोधकविता, मुहूर्त की कविता, द्वीपान्तर कविता, अति कविता, टटकी कविता, ताज़ी कविता, अगली कविता, प्रतिबद्ध–कविता, शुद्ध कविता, स्वस्थ कविता, नंगी कविता, साम्प्रतिक कविता, वीट कविता, ठोस कविता (कांक्रीट कविता) कोलाज कविता, गलत कविता, सही कविता, प्राप्त कविता, सहज कविता, आँख कविता।[1] ये लगभग चार दर्जन नाम हैं जो पिछले कई वर्षों से समानान्तर प्रकाशित पत्र–पत्रिकाओं एवं संग्रह संकलनों में छपते रहे हैं। इनमें से अधिकांश नामों की भीड़ भर है जिन्हें हम आन्दोलन नहीं कह सकते।

इनमें से अधिकांश नामों का महत्व केवल इस बात को लेकर है कि नयी कविता के क्षितिज को इन नामों ने अस्पष्ट और धूमिल बनाया है। 'सनातन सूर्योदयी कविता' का नारा भारती के सन् 1962 ई० के मार्च अंक में वीरेन्द्र कुमार जैन द्वारा दिया गया था। वीरेन्द्र कुमार जैन नयी कविता के उच्छृंखल अहंवाद के विरुद्ध 'सनातन सूर्योदयी कविता के रूप में आगामी कलकी जिस ऊर्ध्वोन्मुखी नूतन कविताधारा का प्रवर्तन करना चाहते थे वह थोड़े से कुतूहल की सृष्टि कर लुप्त हो गयी। उसके घोषणा पत्र की पंक्तियाँ इस प्रकार है–

---

1. सम्पादन, (जगदीश गुप्त, रामस्वरूप चतुर्वेदी, विजयदेव नारायण साही) नयी कविता, सैद्धान्तिक पक्ष (खण्ड–एक), पृ० 90–91

'पतन–पराजय कुण्ठा, आत्म–पीड़ना और जीवित आत्मघात के असूझ अंधकार में आत्महारा, दिशाहारा होकर भटक रही आज की अनाथ काव्य–चेतना के सम्मुख हम अल्प से महत में ले जाने वाली अंधकार से प्रकाश में ले जाने वाली मृत्यु से अमृत में ले जाने वाली और सीमा में असीम की लीला को उतार लाने वाली : आगामीकल की अनिवार्य सनातन सूर्योदयी नूतन कविताधारा का द्वार मुक्त करते हैं।[1]

इन्द्रनाथ मदान द्वारा प्रस्तावित तथा रमेश कुन्तल मेघ एवं गंगा प्रसाद विमल द्वारा सम्पादित 'अभिव्यक्ति–1' में जो चण्डीगढ़ से 1964 में प्रकाशित हुई, अभिनव काव्य की हल्की अनुगूँज सुनाई दी। 'अभिनव काव्य– को इन पंक्तियों द्वारा समझा जा सकता है– 'कदाचित बोध और संचेतना के आधार पर उन सौन्दर्य मूल्यों को व्याख्या देने का काम नयी कविता की अन्य उत्तरवर्ती प्रवृत्तियाँ करेंगी। ऐसी दशा में नये से नयेपन की एक छटपटाहट अपरम्परावादी कवियों सूर्योदयी (आत्मिक आधारवादी) कवियों अभिनव काव्य–सर्जकों तथा काव्याधार पर 'लघु और भव्य' को ऐतिहासिक दृष्टिक्रम के अनुसार अस्वीकृति देने वाले 'मामूली मैं' और दुहरी 'सफरिंग' भोगने वाले कवियों की रचनाओं में अभिव्यक्त हुई है।'[2]

प्रभाकर माचवे वीट कविता के जनक होने का दावा करते हैं लेकिन हिन्दी में न तो अमरीकी बीट कवियों जैसी संवेदना ग्राह्य हो सकती है न उसमें कोई सामंजस्य ही नजर आता है। राजकमल चौधरी की कविताओं में बीटनिकों का कुछ प्रभाव अवश्य मौजूद है। ताजी अथवा टटकी कविता, अस्वीकृति कविता, आज की कविता नव प्रगतिवादी कविता, अगली कविता आन्दोलन भी नयी कविता के आकाश में गुब्बारों की तरह आये और ओझल हो गये। नयी कविता के इतिहास में इन आन्दोलनों का कोई स्थायी महत्व नहीं है। केवल

---

1. सम्पादन, (जगदीश गुप्त, रामस्वरूप चतुर्वेदी, विजयदेव नारायण साही) नयी कविता, सैद्धान्तिक पक्ष (खण्ड–एक), वही, पृ०–91

2. वही, पृ० 94–95

नवगीत और अकविता ने ही अभिव्यक्ति और संवेदना के स्तर पर कुछ मौलिकता लाने पर प्रयत्न किया। अतः उनकी चर्चा यहाँ अपेक्षित है।

नयी कविता के ही युग में नवगीत का विकास सन् 1950 के बाद हुआ। ऐसा प्रमुख गीतकार शंभूनाथ मिश्र का मानना है। 'सन् 1960 ई० के आस–पास नवगीत, नया गीत अथवा आज का गीत नामक नारा कतिपय गीतकारों की ओर से आया था जिसमें शंभुनाथ सिंह, ठाकुर प्रसाद सिंह, केदारनाथ सिंह, डॉ० रामदरश मिश्र, रवीन्द्र भ्रमर, नईम, महेन्द्र शंकर, राजेन्द्र प्रसाद सिंह, ओम प्रभाकर चन्द्रदेव सिंह आदि उल्लेखनीय है।'[1] छायावादोत्तर गीतकारों ने 'निराला जी के परवर्ती गीतों से प्रेरणा लेकर हिन्दी गीत विद्या को एक नये आकार, नये रूप में प्रस्तुत किया। वास्तव में नवगीत नयी कविता की एक विद्या मात्र है। नवगीत नयी कविता की प्रवृत्तियों से अलग कोई प्रवृत्ति नहीं है। नारायणलाल परमार के अनुसार– "नवगीत एक विशेष अर्थ–बोध दायक शब्द है। इसका युग सापेक्ष निर्विवाद है। नवगीत का प्रयास केवल लोकजीवन की ओर प्रत्यावर्तन नहीं है। बल्कि अपनी समकालीन आधुनिकता को उसकी सम्पूर्णता में व्यक्त करने वाला एक अभिव्यक्ति माध्यम है। डॉ० श्रीराम परिहार मानते हैं– नवगीत जीवनानुभूति सम्पन्न आधुनिक धरातल पर अभिव्यक्त काव्यधारा है। नवगीत जैसी कोमल विद्या ने अपने तेवर को परिवर्तित करते हुए बौद्धिकता के समावेश को अनिवार्यता दी है।"[2]

नयी कविता के नवीनतम् रूप को अकविता नाम से प्रचारित करने का प्रयास किया गया। दिल्ली से प्रकाशित 'अकविता' नामक पत्रिका ने नयी कविता जैसे गौरवभाव से अकविता के प्रवर्तन का दायित्व सम्भाला। जगदीश गुप्त ने अभिनव काव्य को अकविता अर्थात् एण्टीकविता का पर्याय बताया। ये अकवि अपनी कविताओं को नयी कविता की संवेदना और अभिव्यक्त भंगिमा से मुक्ति

---

1. डॉ० कान्ति कुमार, नयी कविता, पृ०–24
2. सम्पादक, प्रतापचन्द जैसवाल, नवगीतकार, कवि सोम ठाकुर (अभिनन्दन ग्रन्थ), मंगलम्, पृ०–21

दिलाना चाहते थे। अकविता के नाम से जो काव्य संकलन सामने आये उनमें नयी कविता से अलग कोई विशिष्ट बात देखने में नहीं आई। अकविताओं के रूप में जिन कवियों की रचनाएँ आयीं उनमें नर्मदा प्रसाद खरे, जीवन लाल वर्मा, गिरिजा कुमार माथुर राजकमल चौधरी, भगवत रावत जैसे कवि शामिल थे। अकविता को आन्दोलन का रूप देने वालों ने उसे 'कविता विरोधी' न कहकर 'अन्तरविरोधों की अन्वेषक कविता' कहा।

नयी कविता काव्यधारा मूलतः एक वृक्ष की तरह है और उसके समानान्तर चलने वाले विविध काव्यान्दोलन उस वृक्ष की शाखाओं–प्रशाखाओं की तरह हैं जो मूल रूप में उसी वृक्ष से ही उद्भूत हुए हैं। तेज हवा चलने पर जिस तरह डालियाँ आपस में टकराती हैं और कुछ टूटकर गिर भी जाती हैं वही स्थिति उन विभिनन काव्यान्दोलनों की भी है। शाखाएँ अपने मूल–स्रोत को नकारना चाहें तो नकार दें पर उन्हें अपना प्राण–स्रोत खोजने के लिए तैयार रहना होगा। वस्तुतः नामभेद का प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण नहीं है। अच्छा–बुरा जो भी नाम कालान्तर में लोकग्राह्य हो जाय उसे अपना लेना चाहिए। नयी कविता ने जीवन को सम्पूर्णता में ग्रहण किया है। उसका शिल्प प्रत्यक्ष, बेलाग और व्यावहारिक है। लोकोन्मुखता उसकी प्रमुख विशेषता है। नयी कविता आधुनिक परिवेश को तथा सम्पूर्ण मानव समाज को सहज स्वाभाविक रूप में तथा पूरी ईमानदारी के साथ प्रस्तुत करती है।

□□□□□